मोहन एम. बेसेलियोस मार्थोम मैथ्यूस ली एवं अन्य

बनाम

केरल राज्य एवं अन्य

अप्रेल 4, 2007

(एस. बी. सिन्हा एवं मार्कंडेय काटजू, जे. जे.)

भारत का संविधान, 1950

अनुच्छेद 226- अधिकारों एवं संपतियों के स्वामित्व के विवादित प्रश्नों से संबंधित रिट याचिका-मलंकारा चर्च के कैथोलिक कम मलंकारा मेट्रोपोलिटन और चर्च की संपत्तियों के अधिकारों और विशेषाधिकारों के संबंध में धार्मिक समूहों के बीच विवाद-एक समूह द्वारा रिट याचिका जिसमें निजी उत्तरदाताओं के खिलाफ अपने अधिकारों का प्रयोग करने के लिए उन्हें पुलिस सुरक्षा प्रदान करने के लिए राज्य के अधिकारियों को परमादेश की रिट जारी करने की मांग की गई है-

उच्च न्यायालय का प्रकरण के गुणावगुण पर पक्षकारों के अधिकारों व स्वामित्व के संबंध में अवलोकन-निर्धारित किया गया कि-संपत्तियों के स्वामित्व के संबंध में या इतनी बड़ी संख्या में चर्चों के प्रबंधन के संबंध में एक समूह के दूसरे समूह के खिलाफ अधिकार के संबंध में विवादित प्रश्न,

पुलिस सुरक्षा प्रदान करने की आड़ में अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट अदालत द्वारा निर्धारण के विषय नहीं हो सकते थे। उच्च न्यायालय ने अपने रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए, चर्चाेंं का प्रबंधन करने के लिए एक विशेष समूह के स्वामित्व और अधिकारों के विवादित प्रश्नों में जाने में एक स्पष्ट त्रुटि की है, विशेष रूप से जब ऐसे प्रश्न सिविल न्यायालयों में लंबित हैं।

अनुच्छेद 136 सपठित अनुच्छेद 226-उच्च न्यायालय के समक्ष दायर रिट याचिका की पोषणीयता का प्रश्न-निर्धारित किया गयाः अनुच्छेद 136 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए सर्वाेच्च न्यायालय इस प्रश्न पर विचारण कर सकता है कि क्या उच्च न्यायालय द्वारा रिट याचिका पर विचार किया जा सकता है, विशेष रूप से, जब अपील मूल कार्यवाही की निरंतरता में हो-अपील।

अपीलकर्ताओं द्वारा एक रिट याचिका उच्च न्यायालय के समक्ष दायर की, जिसमें इस आशय के परमादेश की रिट जारी करने का निवेदन किया कि प्रत्यर्थी सं. 1 से 4, राज्य अधिकारी याचिकाकर्ताओं को पर्याप्त एवं उचित पुलिस सहायता प्रदान करें जिससे वे मलंकारा चर्च के संस्थानों से संबंधित अपने अधिकार, कर्तव्य व चर्च के कैथोलिक मलंकारा मेट्रोपोलिटन होने के विषेशाधिकारों का प्रयोग प्रत्यर्थी सं. 5 से 13 या

उनके सेवकों द्वारा कारित बाधा व खतरे के बिना कर सकें। चर्चाेंं की संपत्तियों पर भी दावे किये गये थे, जिनके संबंध में राज्य के विभिन्न अदालतों में लगभग 200 दीवानी मुकदमें लंबित हैं।

उच्च न्यायालय ने मामले के गुणावगुण पर टिप्पणी करते हुए अन्य बातों के साथ-साथ यह भी कहा कि यह नहीं कहा जा सकता है कि प्रत्यर्थियों को संपत्तियों का प्रबंधन करने का कोई अधिकार नहीं है या याचिकाकर्ता, जो मामले के पक्षकार थे, को चर्चाेंं पर कोई अधिकार था एवं प्रार्थनानुसार परमादेश की रिट जारी करने से इंकार कर दिया। पीड़ित रिट याचिकाकर्ताओं ने वर्तमान अपील दायर की।

अपीलों के लंबित रहने के दौरान अपीलार्थी संख्या 1 ने मलंकारा महानगर के कैथोलिक के पद से इस्तीफा दे दिया एवं उनके उत्तराधिकारी द्वारा दायर किये गये प्रतिस्थापन के आवेदन का प्रत्यर्थियों द्वारा यह तर्क देते हुए विरोध किया गया कि कैथोलिकों की चुनाव की वैधता या अन्यथा से संबंधित प्रश्न मुकदमों में विचाराधीन था।

अपीलों का निस्तारण करते हुए एवं अभियोग आवेदन खारिज करते हुए न्यायालय द्वारा यह प्रतिपादित किया गया कि-

1.1. संपत्तियों के स्वामित्व से संबंधित विवादित प्रश्न या इतनी बड़ी संख्या में चर्चाेंं के प्रबंधन के संबंध में एक समूह का दूसरे के

खिलाफ अधिकार किसी एक या दूसरे अपीलार्थी को पुलिस सुरक्षा प्रदान करने की आड़ में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट अदालत द्वारा निर्धारण का विषय नहीं हो सकता। (पैरा 12) (883-डी)

पी. आर. मुरलीधरण और अन्य बनाम स्वामी धर्मानंद तीर्थ पदार और अन्य (2006) 4 एस. सी. सी. 501, पढ़ा गया।

1.2 . उच्च न्यायालय ने स्वामित्व के विवादित प्रश्न के साथ-साथ चर्चाेंं का प्रबंधन करने के लिए एक विशेष समूह के अधिकारों से संबंधित विवादित प्रश्न के संबंध में रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए विचारण कर एक त्रुटि कारित की, विशेष रूप से, जब ऐसे प्रश्न सक्षम दीवानी न्यायालयों के समक्ष विचाराधीन हैं। यह इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए है कि बड़ी संख्या में ऐसे व्यक्ति जिन्होंने विभिन्न न्यायालयों में अलग-अलग मुकदमें दायर किए हैं, वे रिट याचिका में उच्च न्यायालय के समक्ष पक्षकार नहीं थे तथा इस प्रकार, उच्च न्यायालय का कोई भी अवलोकन और निष्कर्ष उन पर बाध्यकारी नहीं होगा। उच्च न्यायालय द्वारा की गई किसी भी टिप्पणी को संबंधित न्यायालयों को उनके स्वंतत्र निर्णयों पर पहुंचने में प्रभावित नहीं करना चाहिए और उनके संबंध में, पक्षों के सभी विवाद खुले रहेंगे। (पैरा 15 एवं 16) (884-बी,डी)

2. इस तथ्य के बावजूद कि अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष पुलिस सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से राज्य या उसके अधिकारियों के विरूद्ध परमादेष की रिट या निर्देश जारी करने के लिए जोर दिया, संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत न्यायालय अपने अपीलार्थी क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए यह निर्धारित कर सकता है एवं करना चाहिए कि क्या रिट याचिका पर विचार किया जा सकता था या नहीं, विशेष रूप से तब जब अपील मूल कार्यवाही की निरंतरता में हो। (पैरा 13) (883-ई-एफ)

3. जहां तक सबसे रेव.पी.एम.ए. मेट्रोपाॅलिटन निर्णय के निर्वचन का संबंध हैै, यह कहना पर्याप्त है कि जहां एक लेटर्स पेटेंट अपील उच्च न्यायालय के समक्ष लंबित है, यह न्यायालय इस मामले में विचारण करने से बचता है। (पैरा 14) (883-जी; 884-ए)

मोस्ट रेव. पी. एम. ए. मेट्रोपाॅलिटन और अन्य बनाम मोरन मार मारथोमा और अन्य ए.आई.आर. (1995) एस.सी. 2001, संदर्भित।

सिविल अपीलीय क्षेत्राधिकारः सिविल अपील सं 5460-5466 वर्ष 2004

ओ.पी. सं. 22946 2002 का (एफ), 2002 का 28495 (पी), 29100 2002 (एल) का 30100 (जी), 2002 (वी) का 30421,2002 (वी)

का 31059 और 39270 2002 का (वाई) में केरल उच्च न्यायालय, एरनाकुलम के दिनांकित 28.01.2003 निर्णय और आदेश से।

आर.एफ. नरीमन सीनियर एड., ई.एम.एस. अनम और फजलिन अनम - अपीलार्थियों की ओर से।

के. परासरन, टी.आर. अधियारूजिना, अनिल दीवान और टी.एम. मोहम्मद यूसुफ सीनियर एड. पी.जे. फिलिप, ए रघुनाथ, सुदर्शन मेनन, महेष सिंह, शकील अहमद सैयद, पी. सुरेशन, पी.वी. दिनेष, सिंधु पी.पी., नवीन आर. नाथ, नेतू अरोड़ा, ललित मोहिनी भट, पी.के. मनोहर, एम.टी. जाॅर्ज और जी. रामकृष्ण प्रसाद- प्रत्यर्थियों की ओर से।

न्यायालय का निर्णय एस.बी. सिन्हा द्वारा पारित किया गया था।

पक्षकारान के मध्य विवाद बड़ी संख्या में जानने वाले ''सीरियाई चर्च'' के प्रबंधन के संबंध में केंद्रित है। वर्तमान विवाद इस न्यायालय द्वारा पारित निर्णय *मोस्ट रेव. पी. एम. ए. मेट्रोपाॅलिटन और अन्य बनाम मोरन मार मारथोमा और अन्य* ए.आई.आर. (1995) एस.सी. 2001, के निर्वचन के संबंध में उत्पन्न होता है। अपीलार्थियों द्वारा केरल उच्च न्यायालय के समक्ष एक रिट याचिका दायर की गई थी, जिसमें अन्य बातों के साथ-साथ निम्नलिखित अनुतोष का अनुरोध किया गया थाः

क. उपरोक्त तथ्यों व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए इस आशय की परमादेश की रिट, या अन्य उचित रिट आदेश या निर्देश प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 व उनके अधीनस्थों के विरूद्ध जारी किये जावे कि वे याचिकाकर्ताओं को पर्याप्त एवं उचित पुलिस सहायता प्रदान करेे जिससे वे प्रदर्श 4 में वर्णित पेरिशेज व मलंकारा चर्च के संस्थानों से संबंधित अपने अधिकार, कर्तव्य व चर्च के कैथोलिक मलंकारा मेट्रोपोलिटन होने के विषेशाधिकारों का प्रयोग प्रत्यर्थी सं. 5 से 13 या उनके सेवकों द्वारा कारित बाधा व खतरे के बिना कर सकें।

ख. इस आशय की परमादेश आदेश या निर्देश की रिट प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 के विरूद्ध जारी की जाये कि वे याचिकाकर्ता को प्रभावी पुलिस सहायता प्रदान करे जिससे वे प्रत्यर्थी सं. 5 से 13 या उनके एजेंटों सेवकों द्वारा किसी भी प्रकार के खतरे या बाधा के बिना अपने अधिकारों, कर्तव्य व मलंकारा ओर्थोडोक्स सीरियन चर्च के मेट्रोपोलिटन की विषेशाधिकारों का प्रयोग कर सकें।

ग. इस आशय की परमादेश की रिट या अन्य रिट आदेश, निर्देश प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 के विरूद्ध जारी की जावे कि वे अन्य बिशप व मलंकारा चर्च के वफादार सदस्यों को पुलिस सहायता प्रदान करे जिससे याचिकाकर्ता मलंकारा चर्च के पैरिश चर्चाेें की धार्मिक संबंधों के संचालन

में प्रत्यर्थी सं. 5 से 13 या उनके सेवकों द्वारा कारित खतरे या बाधा के बिना हिस्सा ले सकें।

घ. इस आशय की परमादेश की रिट, या अन्य रिट आदेश निर्देश प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 के विरूद्ध जारी किये जाये कि वे प्रत्यर्थी सं. 5 से 13 को किसी भी क्षमता में जैसे कि कैथोलिक, बिशप, पूजारी या किसी अन्य रूप में मलंकारा चर्च की संस्थाओं व प्रदर्ष पी 4 में वर्णित मलंकारा ओर्थाैडोक्स सीरियन चर्चाेंं के किसी भी चर्च में प्रवेश करने से रोके।

ड़ प्रत्यर्थी सं. 1 से 4 को उचित निर्देश जारी किये जावे कि वे प्रत्यर्थी सं. 5 से 13 को याचिकाकर्ताओं को प्रदर्श 4 में वर्णित पेरिश चर्च के संबंध में काॅन्सटिट्यूशन आॅफ मलंकारा चर्च की धाराओं की पालना करने में बाधा उत्पन्न करने से रोके।

च. प्रत्यर्थी सं. 5 से 13 को इस याचिका की लागत का भुगतान याचिकाकर्ता को करने का निर्देश जारी किया जावे।

2. उच्च न्यायालय के समक्ष उठाये गये तर्काेंं में से एक तर्क रिट याचिका की पोषणीयता के संबंध में था जो कि इस आधार पर उठाया गया था कि तथ्य के विवादित प्रश्नों व विशेष रूप से पेरिश चर्चाेंं के संबंध में तथाकथित निर्णय को लागू करने से संबंधित प्रश्न पर विचारण नहीं किया जा सकता। हालांकि, अपीलकर्ताओं ने तर्क दिया कि रिट

याचिका पोषणीय थी क्योंकि भारत के संविधान के अनुच्छेद में निहित प्रावधानों को ध्यान में रखते हुए राज्य व उसके अधिकारी इस न्यायालय के निर्णय को प्रभावी बनाने के लिए कर्तव्यबद्ध है।

3. उच्च न्यायालय ने पक्षों के प्रतिद्वंदी विवादों को ध्यान में रखते हुए विचारण के लिए दो प्रश्न तैयार किया-

1- क्या प्रत्यर्थीगण सर्वोच्च न्यायालय द्वारा पारित निर्णय *मोस्ट रेव. पी. एम. ए. मेट्रोपॉलिटन और अन्य बनाम मोरन मार मारथोमा और अन्य* ए.आई.आर. (1995) एस.सी. 2001, से बाध्य है?

2- क्या यह प्रकरण परमादेश की रिट जारी करने योग्य मामला है, जैसा कि याचिकाकर्ताओं द्वारा प्रार्थना की गई है।

4. पक्षों की ओर से दिये गये तर्कों को ध्यान में रखते हुए, जिसमें वह भी शामिल है जहां अपीलकर्ताओं ने उपरोक्त चर्चों की संपत्तियों पर दावा किया है, जिसके संबंध में गंभीर विवाद मौजूद है एवं केरल राज्य की विभिन्न अदालतों में लगभग 200 दीवानी मुकदमें लंबित हैं।

5. हालांकि उच्च न्यायालय ने मामले के गुणावगुण पर टिप्पणी करते हुए यह राय दी कि जहां तक पेरिश चर्चों के अधिकारों का संबंध

है, यहां उनके खिलाफ कोई घोषणा नहीं की गई थी क्याेंकि उन्हें सर्वाेच्च न्यायालय की कार्यवाही में शामिल नहीं किया गया है। तद्नुसार उच्च न्यायालय ने प्रतिपादित किया कि-

क. सर्वोच्च न्यायालय द्वारा 1995 के निर्णय द्वारा पेरिश चर्चाेंं के अधिकार निर्धारित नहीं किये गये थे अतः यह नहीं कहा जा सकता कि प्रत्यर्थियों को अपनी संपत्तियों का प्रबंधन करने का कोई अधिकार नहीं है या याचिकाकर्ता जो मामले में पक्षकार नहीं थे, का चर्चाेंं पर कोई अधिकार है;

ख. प्रदर्श 4 में सूचिबद्ध सभी चर्चाेंं कों पक्षकारों के रूप में शामिल नहीं किये जाने के कारण, उन लोगों के अधिकारों को जो न्यायालय के समक्ष नही हैं, प्रभावित करने वाला कोई आदेश पारित नहीं किया जा सकता है;

ग. चर्चाेंं को एक अलग संगठन बनाने का अधिकार था। वे अनुच्छेद 19, 25 व 26 के तहत मलंकार एसोसियेशन छोडने के भी हकदार थे। यह नहीं दिखाया गया है कि उन्होंने ऐसा करने में अवैध रूप से काम किया था;

घ. केवल उसके मानने मात्र से पुलिस सहायता का आदेश नहीं दिया जा सकता है। इसमें राज्य का खर्च षामिल है। यह न्यायालय या

सक्षम अधिकारी के समक्ष की गई कार्यवाही का विकल्प नहीं है। यह आम तौर पर केवल तभी दिया जा सकता है जब व्यक्ति या संपति के लिए मौजूदा खतरे से संबंधित स्पष्ट साक्ष्य उपलब्ध हो। धार्मिक संस्थानों से जुड़े मामलों में सामान्य रूप से पुलिस सुरक्षा प्रदान करने का आदेश देना अनुचित होगा, जब तक कि पुलिस के प्रवेश की अनुमति देने का कोई स्पष्ट मामला ना हो;

ड़. उपर वर्णित तथ्यों व परिस्थितियों को ध्यान में रखते हुए याचिकाकर्ता द्वारा की गई प्रार्थनानुसार, परमादेश की रिट जारी करने का कोई आधार नहीं बनता है।

6. पक्षकारान की ओर से उपस्थित विद्वान अधिवक्ताओं द्वारा उठाये गये प्रतिद्वंदी तर्कों पर विचार करने से पूर्व यह जाहिर होता है कि अपीलार्थी संख्या 1 ने 2005 में मलंकारा महानगर के कैथोलिका पद से इस्तीफा दे दिया था। उनकी मृत्यु 26.01.2006 को हुई। उनके उतराधिकारी, जो मुख्य कैथोलिक एवं मलंकारा मेट्रोपोलिटन है, के द्वारा प्रतिस्थापन के लिए एक आवेदन दायर किया गया है, जिसे 2006 के आई.ए. नंबर 16 के रूप में चिन्हित किया गया है।

कथित प्रतिस्थापन आवेदन का प्रत्यर्थियों द्वारा यहां यह तर्क देते हुए विरोध किया जा रहा है कि कैथोलिकों के चुनाव की वैधता या अन्य के

संबंध में प्रश्न एक मुकदमें में विचाराधीन है। इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि इस संबंध में विवाद मौजूद है कि क्या इसमें अपीलकर्ता उपरोक्त पद धारण करने के लिए एक वैध रूप से निर्वाचित व्यक्ति है, और इसके अलावा, इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए कि क्या हम उसकी अनुपस्थिति में आगे बढ सकते हैं, हम प्रतिस्थापन आवेदन में कोई आदेश पारित करना न्यायोचित नहीं समझते।

7. हमारी राय में विचारण के लिए जो सवाल उठता है, वह यह है कि क्या इस तरह की स्थिति में, उच्च न्यायालय को पक्षकारान की प्रतिद्वंदी तर्काें पर विचारण करना चाहिए था। हमारा उत्तर ''नहीं'' है।'' इस बात में कोई संदेह नहीं हो सकता कि किसी राज्य को अपने कानूनी कर्तव्यों का पालन करने का परमादेश की रिट का आदेश तब दिया जा सकता है जब वह ऐसा करने में विफल रहता है या उपेक्षा करता है। हालांकि, यह एक और बात है कि मामले के केवल उस पहलू पर विचार करते हुए, न्यायालय सीमित पहलू पर निर्णय देने की आड़ में स्वामित्व के विवादित प्रश्न व इस न्यायालय के निर्णय के निर्वचन पर विचार करेगा, जहां अन्य कोई उपचार केवल उपलब्ध नही है बल्कि जैसा कि यहां देखा गया है, वास्तव में 200 से अधिक मुकदमें, मामले के एक या दूसरे पहलू को छूते हुए, विभिन्न दीवानी न्यायालयों में लंबित हैं।

8. हमारी राय मे, भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय सार्वजनिक विधि उपचार और निजी विधि उपचार संबंधित मामलों में एक अंतर को ध्यान में रखना चाहिए। संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत अपने क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते समय उच्च न्यायालय निःसंदेह एक पूर्ण शक्ति का प्रयोग करता है लेकिन उसके संबंध में कुछ सीमायें भी विद्यमान रहती हैं। आम तौर पर जब परमादेश की रिट का आदेश भारत के संविधान के अनुच्छेद 12 के अर्थ के अंतर्गत एक ''राज्य'' के खिलाफ या सार्वजनिक रूप से कार्य करने वाले सार्वजनिका प्राधिकरण या सार्वजनिक उपयोगिता संबंधी सरोकार या जहां प्रत्यर्थियों के कार्य एक कानून के लिए संदर्भित है, के खिलाफ जारी की जायेगी तो उसका अर्थ होगा कि अच्छे कारणों को छोडकर न्यायालय निजि कानून उपचार से जुडे मामले पर विचार नहीं करेगा।

9. पुलिस सुरक्षा का अनुतोष् प्रदान करने से संबधित प्रश्न कुछ इसी तरह के मामले में, *पी. आर. मुरलीधरण और अन्य बनाम स्वामी धर्मानंद तीर्थ पदार और अन्य* (2006) 4 एस. सी. सी. 501, में इस न्यायालय के समक्ष विचारण के लिए आया था जिसमें हममें से एक पार्टी थी। वहां यह प्रतिपादित किया गया थाः

"इसके अतिरिक्त, दीवानी अदालत का क्षेत्राधिकार पूर्ण और व्यापक है। इस प्रकृति के मामले में एक रिट कार्यवाही दीवानी मुकदमें का विकल्प नहीं हो सकती है।"

10. जे. बालासुब्रमण्यन ने सहमति जाहिर करते हुए यह राय दी किः

"एक रिट याचिकाकर्ता को सुरक्षा देने के लिए पुलिस अधिकारियों को निर्देश देने वाले परमादेश की रिट के आदेश की आड़ में एक रिट याचिका को सिविल अधिकारों पर निर्णय लेने का मंच नहीं बनाया जा सकता। यह एक बात है कि उच्च न्यायालय के समक्ष ऐसी रिट जारी करने हेतु इस आधार पर प्रार्थना पत्र पेश किया गया है कि, एक विशेष पक्ष ने रिट याचिकाकर्ता के पक्ष में पारित किये गये डिक्री या निषेधाज्ञा के आदेश का पालन नहीं किया है; याचिकाकर्ता के आवेदन के बावजूद जानबूझकर उस डिक्री या आदेश का उल्लंघन किया जा रहा था या कि पुलिस अधिकारी न्यायालय द्वारा पारित डिक्री या आदेश अनुसार उसे आवश्यक सुरक्षा नहीं दे रहे हैं। लेकिन संपति, स्थिति या अधिकार संरक्षण के संबंध में परमादेश की

रिट जारी करवाना अलग बात है, जिसका निर्णय लिया जाना बाकी है एवं जब इस तरह का निर्णय केवल दीवानी मुकदमें के रूप में किया जा सकता है। एक रिट याचिकाकर्ता के लिए अनुच्छेद 226 के तहत उच्च न्यायालय के समक्ष परमादेश की रिट के आदेश के माध्यम से, अपनी संपति पर कब्जा प्रदान करने हेतु पुलिस सहायता का आदेश, बिना सिविल न्यायालय में अपना कब्जा साबित किये, जारी करवाने की प्रार्थना करना रिट याचिका की प्रक्रिया का दुरूपयोग करना होगा। इस प्रकृति के मामलों में अनुतोष प्रदान करने के प्रलोभन का उच्च न्यायालय द्वारा विरोध किया जाना चाहिए। संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत व्यापक क्षेत्राधिकार तभी प्रभावी और सार्थक रहेगा जब समझदारी से और उचित परिस्थितियों में उसे प्रयोग किया जावे।"

11. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं द्वारा तर्क दिया गया है कि अपीलकर्ताओं को अब एक अलग पक्ष रखने की अनुमति नहीं दी जा सकती है, ना ही उन्हें अपने तर्काेंं के साथ खिलवाड़ करने की अनुमति दी जा सकती है। उच्च न्यायालय उनके द्वारा दिये गये तर्काेंं के आधार पर ही अपनी राय पर पहुंचा था। इस संबंध

में हमारा ध्यान उन आधारों की ओर भी आकर्शित किया गया है जो हमारे समक्ष अपीलकर्ताओं द्वारा यह तर्क देने के लिए लिये गये थे कि राज्य और उसके अधिकारियों के संबंध में अपीलार्थी के कथित कानूनी अधिकार को लागू करने के लिए रिट मांगी गई थी, ना कि निजी व्यक्तियों के खिलाफ मांगी गई थी।

12. उच्च न्यायालय व हमारे समक्ष लंबित विशेष अनुमति याचिकाओं में अपीलकर्ताओं के ऐसे तर्क हो सकते हैं, परंतु हमारे मन में कोई संदेह नही है कि संपतियों के स्वामित्व या इतनी बड़ी संख्या में चर्चाेंं के प्रबंधन के संबंध में एक समूह के दूसरे समूह के खिलाफ अधिकार से संबंधित विवादित प्रश्न, एक या दूसरे अपीलार्थी को पुलिस सुरक्षा देने की आड़ में भारत के संविधान के अनुच्छेद 226 के तहत एक रिट न्यायालय द्वारा निर्धारण का विषय नहीं हो सकते थे।

13. अतः हमारी यह राय है कि हालांकि अपीलकर्ताओं ने उच्च न्यायालय के समक्ष पुलिस सुरक्षा प्रदान करने के उद्देश्य से राज्य या उसके अधिकारियों के विरूद्ध परमादेश की रिट या निर्देश जारी करने के लिए जोर दिया, संविधान के अनुच्छेद 136 के तहत, न्यायालय अपने अपीलार्थी क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए यह निर्धारित कर सकता है एवं करना

चाहिए कि क्या रिट याचिका पर विचार किया जा सकता था या नहीं, विशेष रूप से तब जब अपील मूल कार्यवाही की निरंतरता में हो।

14. प्रत्यर्थियों की ओर से उपस्थित विद्वान वरिष्ठ अधिवक्ताओं द्वारा यह तर्क दिया गया था कि उच्च न्यायालय की विभिन्न पीठ इस न्यायालय के निर्णय *मोस्ट रेव. पी. एम. ए. मेट्रोपाॅलिटन और अन्य बनाम मोरन मार मारथोमा और अन्य* ए.आई.आर. (1995) एस.सी. 2001, के निर्वचन के संबंध में अलग अलग विचार ले सकती हैं एवं इसके समर्थन में हमारे समक्ष उक्त न्यायालय के सिंगल पीठ द्वारा पारित निर्णय *सेंट जाॅर्ज जैकोबी सीरियन क्रिश्चियन चर्च एवं अन्य बनाम केरल राज्य एवं अन्य रिट याचिका* (सी) नं. 32114/2006 जहां केरल उच्च न्यायालय के खंडपीठ द्वारा पारित किये गये आदेश से भिन्न विचार प्रकट किये गये। तथापि हम उपर व्यक्त किये गये विचारों को ध्यान में रखते हुए एवं इस तथ्य को भी ध्यान में रखते हुए कि एक लेटर्स पेटेंट अपील, व्यथित पक्षकारान द्वारा केरल उच्च न्यायालय के खंडपीठ के समक्ष दायर की जा चुकी है, यह न्यायालय इस मामले से जाने में बचता है।

15. उपरोक्त विवेचनानुसार हमारी राय यह है कि उच्च न्यायालय ने स्वामित्व के विवादित प्रश्न के साथ-साथ चर्चाेें का प्रबंधन

करने के लिए एक विशेष समूह के अधिकारों से संबंधित विवादित प्रश्न के संबंध में रिट क्षेत्राधिकार का प्रयोग करते हुए विचारण कर एक त्रुटि कारित की, विशेष रूप से, जब ऐसे प्रश्न सक्षम दीवानी न्यायालयों के समक्ष विचाराधीन हैं। अतः हमारी राय में उच्च न्यायालय द्वारा की गई किसी भी टिप्पणी को संबंधित न्यायालयों को उनके स्वंतत्र निर्णयों पर पहुंचने में प्रभावित नहीं करना चाहिए और उनके संबंध में, पक्षों के सभी विवाद खुले रहेंगे।

16. हमारे द्वारा यह राय इस तथ्य को ध्यान में रखते हुए दी जा रही है कि बड़ी संख्या में ऐसे व्यक्ति जिन्होंने विभिन्न न्यायालयों में अलग-अलग मुकदमें दायर किए हैं, वे रिट याचिका में उच्च न्यायालय के समक्ष पक्षकार नहीं थे तथा इस प्रकार, उच्च न्यायालय का कोई भी अवलोकन और निष्कर्ष उन पर बाध्यकारी नहीं होगा।

17. यहां यह उल्लेखित किया जाना आवश्यक है कि हमारे द्वारा सिविल न्यायालयों में लंबित मामलों के गुणावगुण पर कोई टिप्पणी नहीं की गई है।

18. अपीलों का निस्तारण तद्नुसार किया जाता है।

19. अभियोग दाखिल करने का आवेदन खारिज किया गया।

अपील निस्तारित की गई।

यह अनुवाद आर्टिफिशियल इंटेलिजेंस टूल 'सुवास' की सहायता से अनुवादक न्यायिक अधिकारी निधि पूनिया (आर.जे.एस.) द्वारा किया गया है।

अस्वीकरण: यह निर्णय पक्षकार को उसकी भाषा में समझाने के सीमित उपयोग के लिए स्थानीय भाषा में अनुवादित किया गया है और किसी अन्य उद्देश्य के लिए इसका उपयोग नहीं किया जा सकता है। सभी व्यावहारिक और आधिकारिक उद्देश्यों के लिए, निर्णय का अंग्रेजी संस्करण ही प्रामाणिक होगा और निष्पादन और कार्यान्वयन के उद्देश्य से भी अंग्रेजी संस्करण ही मान्य होगा।